H-7

भारत की बहुभाषिक संस्कृति में एकभाषा सूत्र की उपयोगिता – महात्मा गांधी की नजर से

– डॉ. धनेश द्विवेदी

भाषा पर किसी भी बात की शुरुआत करने से पहले यह जान लेना जरूरी है कि यह एक सामाजिक वस्तु है, मानसिक संकल्पना के साथ–साथ यह एक सामाजिक यथार्थ भी है, व्याकरणिक इकाई होने के साथ–साथ यह संस्थागत प्रतीक भी है और संप्रेषण का अन्यतम उपकरण होने के साथ–साथ यह हमारी सामाजिक अस्मिता का एक सशक्त माध्यम भी है। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि हर भाषा एक निश्चित समुदाय के व्यक्तियों को भावना चिंतन और जीवन दृष्टि के धरातल पर एक–दूसरे के नजदीक लाती है और उन्हें आपस में जोड़ती और बांधती है। भाषा की इस शक्ति के सहारे व्यक्ति का 'मैं' समुदाय के 'हम' में फैलाव पाता है।

भाषा अपने सामाजिक समुदाय के सदस्यों को अंदरूनी तौर पर जुड़ने और बांधने वाली एक जबरदस्त ताकत के रूप में अपनाई जा सकती है। इसके बीच यह भी सच है कि अगर भाषा व्यक्ति से 'मैं' का विस्तार कर 'हम' में बदलने की ताकत रखती है तो वहीं इस 'हम' को, वह 'वे' के विरोध में खड़ा करने की शक्ति भी रखती है। भाषा की दोहरी प्रकृति के प्रति प्रायः हम अपनी आंख बंद कर लेते हैं। भाषा अगर दो दिलों को जोड़ने का काम करती है तो वह दो दिलों को तोड़ने का साधन भी बनती है। हम सभी जानते हैं कि भारत एक बहुभाषी देश है लेकिन सच यह है कि भारत का एक–एक कोना बहु भाषा–भाषी है पर भाषा का सहारा लेकर हम उसमें क्षेत्रीयता का रंग भरते चले जाते हैं। आंध्रप्रदेश में एक नहीं अनेक भाषाएं बोली जाती हैं पर तेलुगु भाषा को क्षेत्रीयता का आधार बनाते हुए एक तरफ उसमें एकता का भाव पैदा करना चाहते हैं तो दूसरी तरफ उसे विशिष्ट सिद्ध करते हुए हिंदी, तमिल आदि अन्य इकाइयों से काटने की ओर भी प्रवृत्त होते हैं। जो स्थिति आंध्र प्रदेश में तेलुगु भाषा की है उससे भिन्न स्थिति तमिलनाडु और तमिल, कर्नाटक और कन्नड़, महाराष्ट्र और मराठी आदि क्षेत्रों की नहीं है। क्षेत्रीय अस्मिता के प्रतीक के रूप में भाषा के प्रश्न को उभारने का काम नकारात्मक शक्तियों के लिए अत्यंत सुविधा जनक है क्योंकि भाषा व्यक्तियों को जोड़ने और तोड़ने की दोनों ही शक्ति से सहज ही बंधी हुई है। वह समुदाय में भावनात्मक एकता का कारण भी है और भावना के स्तर पर अन्य समुदायों से विद्वेश का आधार भी है।

राष्ट्रीय संदर्भ में बहुभाषा भाषी देश की संप्रेषण व्यवस्था की अनिवार्यता वहां की संपर्क भाषा पर आधारित होती है। कभी इसका रूप राजभाषा को जन्म देता है और कभी राष्ट्रभाषा को। राजभाषा का संबंध राष्ट्रीयता (नेशनलिज्म) से रहता है वह राष्ट्र को राजनीतिक और आर्थिक दृष्टि से एक सूत्र में बांधने के काम में आने वाली प्रशासनिक प्रयोजनों की भाषा होती है, इसके लिए यह जरूरी नहीं है कि यह भाषा अपने देश की ही हो। राष्ट्रभाषा का संबंध राष्ट्रता (नेशनलिज्म) से रहता है। उसके पीछे जाति प्रमाणिकता और ग्रेट ट्रेडीशन की शक्ति काम करती है और उसके सहारे समाज राष्ट्र के स्तर पर समाज और संस्कृति के संदर्भ में तादात्म्य स्थापित करता है और अपनी सामाजिक

समस्या पर उन्होंने बहुत सी महत्वपूर्ण बातें कही हैं। गांधी जी ने अपनी भाषा के प्रति अपना प्रबल समर्थन और प्रेम दिखलाया है। सन् 1909 में उन्होंने हिंदी स्वराज और अपनी भाषा नीति की घोषणा इस प्रकार की थी, ''सारे हिंदुस्तान के लिए जो भाषा चाहिए, वह तो हिंदी ही होनी चाहिए। उसे उर्दू या नागरी लिपि में लिखने की छूट होनी चाहिए। हिंदू–मुसलमानों के संबंध ठीक रहें, इसलिए हिंदुस्तानियों को इन दोनों लिपियों को जान लेना आवश्यक है। ऐसा होने पर हम आपस के व्यवहार में अंग्रेजी को निकाल सकेंगे।''

विभिन्न स्थानों पर दिए गए गांधी जी के भाषणों में हिंदी के प्रति सदैव ही अनुराग दिखाई देता है। बनारस, भागलपुर, कोलकाता आदि अनेक स्थानों पर उन्होंने जो भाषण दिए, वहां सदैव हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने का संदेश दिया। उत्तर भारत में हिंदी का जो भी विकास हुआ, गांधीजी उससे अनजान नहीं थे। इसलिए उनका मानना था कि हिंदी को एक सागर की तरह व्यापक हो जाना है न कि नदी की तरह संकुचित रह जाना।

भारतीय राजनेताओं में गांधीजी ही पहले ऐसे नेता थे, जिन्होंने ग्रामीण प्रदेश में राष्ट्रीय एकता को समृद्ध करने के लिए हिंदी को विधिवत् सिखाए जाने को आवश्यक समझा और अपनी एक योजना बनाई। इसके अंतर्गत वेंकटेश नारायण तिवारी जैसे हिंदी सेवियों को लेकर 'दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा' का गठन किया। गांधीजी के अनुसार, भारत की राष्ट्रभाषा में इन पांच विशेषताओं का होना आवश्यक है। पहला, राज्य के कार्यों के लिए सरल हो, दूसरा सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक संप्रेषण का माध्यम बनने लायक हो, तीसरा, आधी से ज़्यादा जनता इसे मूल रूप में समझ सके, चौथा, आम जनता आसानी से ग्रहण कर सके और पांचवॉ, यह कामचलाऊ भाषा के रूप में प्रयुक्त न हो। गांधीजी ने तर्कसंगत रूप से यह साबित कर दिया कि अंग्रेजी में ये सारे गुण नहीं हैं और हिंदी ही एक ऐसी भाषा है, जो इन सभी मानकों पर खरी उतरती है, लेकिन उनका कदापि यह लक्ष्य नहीं था कि हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाकर अन्य भारतीय एवं क्षेत्रीय भाषाओं की अनदेखी कर दी जाए।

भाषा के बारे में अपनी साम्राज्यवाद विरोधी एवं सामाजिक दृष्टि का परिचय देते हुए गांधी जी ने 'हिंद स्वराज' में लिखा, ''प्रत्येक पढ़े–लिखे भारतीय को अपनी भाषा का, हिंदी भाषी को संस्कृत का, मुसलमान को अरबी का, पारसी को फ़ारसी का और हिंदी का ज्ञान सबको होना चाहिए। सारे भारत के लिए जो भाषा चाहिए वह तो हिंदी ही होगी। उसे उर्दू या देवनागरी लिपि में लिखने की छूट रहनी चाहिए। हिंदू और मुसलमानों में सद्भाव है। इसलिए बहुत से भारतीयों को ये दोनों लिपियां जान लेनी चाहिए (संपूर्ण गांधी वांग्मय खंड 10, पेज 56)।''

यहां यह उल्लेखनीय है कि गांधी जी ने हिंदी को किसी धर्म विशेष भाषा के रूप में नामांकित न कर सभी भारतीयों की भाषा के रूप में उसे पहचाना। यह प्रकारांतर से हिंदी के धर्मनिरपेक्ष और राष्ट्रीय चरित्र की स्वीकृति थी। गांधी जी का उक्त कथन ब्रिटिश साम्राज्यवाद के उस भाषाई षड्यंत्र का जवाब भी था जिसके तहत 19वीं सदी में फ़ोर्ट विलियम कॉलेज द्वारा हिंदी को हिंदुओं की तथा उर्दू को मुसलमानों की भाषा के रूप में प्रचारित करके हिंदू मुस्लिम अलगाववाद की नींव तैयार की गई थी।

हिंदी भाषा के स्वरूप की व्याख्या करते हुए गांधी जी ने कहा है कि "मैं हिंदी भाषा उसे कहता हूं जिसे उत्तर में हिंदू और मुसलमान बोलते हैं और देवनागरी या फ़ारसी (उर्दू) में लिखते हैं।"

गांधीजी चाहते थे कि बुनियादी शिक्षा से

लेकर उच्च शिक्षा तक सब कुछ मातृभाषा के माध्यम से हो। दक्षिण अफ्रीका प्रवास के दौरान ही उन्होंने समझ लिया था की अंग्रेजी माध्यम की शिक्षा हमारे भीतर औपनिवेशिक मानसिकता बढ़ाने की मुख्य जड़ है। उनका कहना था कि हम स्वराज की बात भी पराई भाषा में करते हैं, इससे बड़ी दरिद्रता और क्या है?

विदेशी भाषा में शिक्षा देने के जो नुकसान गांधीजी ने बीसवीं सदी के आरंभिक दशकों में बताए, उनसे आज भी असहमत होना असंभव है। हमें स्मरण रखना चाहिए कि पिछले कुछ दिनों में एक लाख करोड़ की लागत वाली और विश्व बैंक से कर्ज के बल पर जिस बुलेट ट्रेन की नींव रखी गई है, उस जापान की कुल आबादी सिर्फ 12 करोड़ है। जापान का भाषाई प्रेम किसी से छुपा नहीं है। हमारा पड़ोसी चीन भी हमारी ही तरह बहुभाषी देश है, किंतु उसने अपनी भाषा चीनी (मंदारिन) को प्रतिष्ठित किया और उसे वहां पढ़ाई का माध्यम बनाया। इस भाषा के बल पर आज दुनिया में चीन ने विकास की नई परिभाषा का सृजन किया है। इससे यह भी साफ़ होता है कि आज के दौर में भाषा समृद्धि के बिना राष्ट्र का संपूर्ण विकास संभव नहीं है।

आज की आवश्यकता को देखते हुए सभी राज्यों को अपनी मानसिकता पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता तो है ही, साथ ही हिंदी भाषा के आगे बढ़ने पर उनकी स्वयं के राज्य की भाषा पर किसी तरह का संकट है, ऐसे अव्यावहारिक दुष्प्रचार से बचने की भी महती कोशिश करने की ज़रूरत है।

पता: उपसंपादक, गृह मंत्रालय

मो.नं.: 9560706305

यह भारत की जनता के बहुत बड़े वर्ग की और, यदि हम छोटे–मोटे बोलीगत रूप भेदों को छोड़ दें तो, बहुमत की भाषा है। वास्तव में यह उसी प्रकार भारत की राष्ट्रीय भाषा होने का दावा कर सकती है, जिस प्रकार से हिंदू धर्म भारत का 'राष्ट्रीय धर्म' है।

,,,

भारत के सभी भागों में सारी शिक्षा का एक उद्देश्य हिंदी का पूर्ण ज्ञान भी होना चाहिए। हिंदी का भारत की राष्ट्रभाषा होना निश्चित है। संचार व्यवस्था और वाणिज्य की प्रगति निश्चय ही यह कार्य संपन्न करेगी।

– चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य

हिंदी ही एक भाषा है, जो भारत में सर्वत्र बोली और समझी जाती है।

– डॉ. ग्रियर्सन